१

प्राचीन जैन इतिहास संग्रह

(चतुर्थ भाग)

—ज्ञानसुन्दर

जैन इतिहास ज्ञान भानू किरण नं०

श्री रत्नप्रभ सूरिश्वर पाद पद्मभ्योनमः

प्राचीन जैन इतिहास संग्रह

(चतुर्थ भाग)

[जैन धर्म का प्रचार]

श्री जैन पोरवाल
जैन ज्ञान भंडार
मु० पाडीव (राज०)

लेखक
मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज

प्रकाशक
श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला
मु० फलोदी (मारवाड़)

वीर सं० २४६१] ओसवाल सं० २३६१ [वि० सं० १६६१

प्रथमावृत्ति १०००

प्रबन्धकर्त्ता
मास्टर भीखमचन्द
शिवगंज (सिरोही)

द्रव्य सहायक
श्रीसंघ—शिवगंज (सिरोही) श्रीमद् पंचमाङ्ग भगवतीजी
सूत्र की ज्ञानपूजा की आय से ।

मुद्रक
सत्यव्रत शर्मा
शान्ति प्रेस, शीतलागली—आगरा ।

* श्री रत्नप्रभसूरीश्वर पादपद्मेभ्योनमः *

प्राचीन जैन इतिहास संग्रह

(चतुर्थ भाग)

श्री जैन धर्म का प्रचार ।

भगवान् महावीर स्वामी से लेकर महाराज सम्प्रति एवं प्रसिद्ध नरेश खारवेल के शासन काल पर्यन्त जैन धर्म का प्रचार भारत के कोने कोने में था । ऐसा कोई भी प्रान्त नहीं था कि जहाँ के लोग जैन धर्म को धारण कर उच्च गति के अधिकारी न होते हों । पाठकों को ज्ञात होगा कि प्रातःस्मरणीय जैनाचार्य स्वयंप्रभसूरि तथा पूज्यपाद आचार्य श्री रत्नप्रभसूरि ने जिस महाजन वंश को स्थापित किया था वह भी दिन ब दिन उन्नति की ओर निरन्तर अग्रसर हो रहा था । इतना ही नहीं पर इतिहास साफ़ साफ़ सिद्ध कर रहा है कि भारत में ही नहीं किन्तु भारत के बाहर भी प्रवास में जैन धर्म का प्रचार

आठों दिशाओं में था। उस समय इस बात का पूर्ण प्रयत्न किया गया था कि कोई देश ऐसा न रहने पावे कि जहाँ के लोग परम पुनीत जैन धर्म की छत्रछाया में सुख और शान्तिपूर्वक अपने जीवन को व्यतीत न करें। उपर्युक्त कथन कपोल कल्पित नहीं है बल्कि ऐतिहासिक सत्य है।

(१) **आर्द्रकुमार** नामक राजपुत्र ने महाराजा श्रेणिक के सुपुत्र अभयकुमार के पूर्ण प्रयत्न करने* से दीक्षा ग्रहण कर प्रबल उत्कण्ठा से भारत के बाहर अनार्य देशों में अनवरत परिश्रम कर के जैन धर्म का प्रचार बहुत जोरों से किया था।

(२) **यूरोप के** मध्य में आये हुए आस्ट्रिया हंगेरी नामक प्रान्त में भूकम्प के कारण जो भूमि पर एकाएक परिवर्तन हुए थे उनको ध्यानपूर्वक अन्वेषण की दृष्टि से अवलोकन करते हुए कई प्राचीन पदार्थ प्राप्त हुए एवं बुडापेस्ट नगर में एक अंग्रेज के बगीचे के खोदने के कार्य के अन्दर भूमि से भगवान महावीर स्वामी की एक मूर्त्ति हस्तगत हुई है जो बहुत ही प्राचीन है। इससे मानना पड़ता है कि यूरोप के मध्यस्थल में भी जैनोपासकों की अच्छी बस्ती थी तथा वे आत्मकल्याण के उज्ज्वल उद्देश्य से भगवान की मूर्त्ति के दर्शन तथा पूजन कर अपने जीवन को सफल बनाकर आत्मोन्नति के ध्येय को सिद्ध करने में सतत संलग्न थे। इन्हीं कारणों से वे लोग जैन मन्दिरों का निर्माण कराते थे तथा उनमें भव्य मूर्त्तियों का अर्चन करते थे।

---

* अभयकुमार ने भगवान् आदीश्वर की मूर्त्ति भेजी थी जिसके दर्शन से आर्द्र कुमार को जातिस्मरण ज्ञान हुआ।

(३) **इस्लाम धर्म** के संस्थापक पैग़म्बर महमूद के पूर्व मक्का में भी जैन मन्दिर विद्यमान था। किन्तु काल की कुटिलता से जब जैनी लोग उस देश में न रहे तो 'महुवा' (मधुमति) के दूरदर्शी श्रावक मक्के से वहाँ स्थित मूर्त्तियों को ले आये तथा अपने नगर में उन्हें प्रतिष्ठित करली जो आज पर्यन्त भी विद्यमान हैं इससे सिद्ध होता है कि ऐशिया के ऐसे-ऐसे रेगिस्तानों में भी जैनधर्म के व्रतधारी श्रावकों का वास था। यह क्षेत्र दुर्लभ था तथापि प्रयत्न करने वाले तो वहाँ भी प्रचार हेतु पहुँच गये थे; तो कोई कारण नहीं दीखता कि वे अन्य सुलभ प्रान्तों में न गये हों।

महाराजा सम्प्रति के चरित्र से स्पष्ट ज्ञात होता है कि इनके प्रयत्न से कई सुभट अनार्य देशों में साधु के वेष में इस कारण भेजे गये थे कि वहाँ जाकर इष्ट क्षेत्र को साधुओं के विहार योग्य बना दें और इस कार्य में पूर्ण सफलता भी उन्हें मिली। कई साधु अनार्य देशों में गये और वहाँ के लोगों की जैनधर्म पर श्रद्धा उत्पन्न कराने में समर्थ हुए। इस प्रयत्न से इतनी सफलता मिली कि अर्बिस्तान, अफ़गानिस्तान, तुर्किस्तान, ईरान, युनान, मिश्र, तिब्बत, चीन, जापान, ब्रह्मा, आसाम, लंका, अफ़्रीका और अमेरिका तक के प्रदेशों में जैनधर्म का प्रचार हो गया। यह बात केवल दन्तकथा रूप में नहीं है पर प्राचीन ग्रन्थों में इन सब बातों का प्रमाण मिलता है इतना ही नहीं बल्कि आज की सोध एवं खोज के पुरातत्व विद्वानों ने भी साबित कर दिया है कि जैनधर्म अमेरिका तक प्रसरा हुआ था। हाल ही में एक विद्वान् ने बंबई समाचार अखबार ता० ४ अगस्त सन् ३४ को एक जैन-चर्चा शीर्षक लेख में ठीक प्रमाणों से सिद्ध किया

है कि मंगोलिया और अमेरिका में एक समय जैनधर्म का बहुत प्रचार था और जैन मन्दिरों के खण्डहर भी प्रचुरता से पाये जाते हैं एवं यह लिखना अतिशय युक्ति नहीं है कि पूर्वोक्त प्रदेशों में जैन धर्म का ख़ूब प्रचार था।

उपर्युक्त वर्णन से मालूम होता है कि अनार्य देशों में भी जैनियों की घनी बस्ती थी। वहाँ के लोग भी जैन धर्म का पालन कर अपने मानव जीवन को सफल करते थे। ऐसी दशा में जब कि दूर दूर के देशों में जैनधर्मावलम्बी विद्यमान थे तो यह स्वाभाविक ही है कि भारत के कोने कोने में जैनधर्म की ज्योति जागृत हुई हो। इस बात को स्वीकार करते किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता।

(५) नैपाल प्रान्त। जब भारत के पूर्व में विक्रम पूर्व चौथी शताब्दी में भीषण दुष्काल पड़ा था तो आचार्य भद्रबाहुसूरि ने अपने पाँचसौ शिष्यों सहित नैपाल में विहार किया था इनके अतिरिक्त और भी कई साधु इस प्रदेश में विचरण करते थे। इससे सिद्ध होता है कि इस समय जैनों की घनी बस्ती उस प्रान्त में होगी। इतने मुनिराजों का निर्वाह व्रतपूर्वक बिना जैन जाति के लोगों के होना अशक्य था। इस पर भी जिस प्रान्त में भद्रबाहुसूरि जैसे चमत्कारी और उत्कट प्रभावशाली आचार्य विहार करते रहे उस प्रान्त में जिनशासन की इस प्रकार की बढ़ती हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। किन्तु इस बात को जानने का कुछ भी साधन नहीं है कि भद्रबाहुसूरि के पश्चात् जैनधर्म किस प्रकार नैपाल में न रहा। हाँ, खोज करने पर केवल इतना प्रकट होता है कि विक्रम की दसवीं तथा ग्यारहवीं शताब्दियों में नैपाल प्रदेश में जैनधर्म का प्रचार था। नैपाल के

व्यौपारी इस ओर आते और यहाँ से बहुत सा माल ले जाते थे इस प्रकार परस्पर विचार विनिमय का साधन बना हुआ था।

(६) **अङ्ग बङ्ग और मगध प्रान्त**। प्रातः स्मरणीय भगवान् महावीर स्वामी एवं उनके शिष्य प्रशिष्यों का विहार प्रायः इसी प्रान्त में हुआ था। महाराजा श्रेणिक, कौणिक, उदाई, नौ नन्दनृप, मौर्य सम्राट्, चन्द्रगुप्त तथा सम्प्रति नरेश के राज्य-काल में तो जैनधर्न ही राष्ट्रधर्म था। उस समय जैनधर्म का प्रवेश प्रत्येक घर में हो चुका था। अहिंसा की पताका सतत भारत भूमि पर फहरा रही थी। यहाँ तक कि विक्रम की चौद-हवीं शताब्दी पर्यन्त भी जैनधर्मावलम्बियों का इस प्रान्त में खासा जमघट था। अब से लगभग दो और तीन शताब्दियाँ पहले 'सारक' नामक जाति के लोग इस प्रान्त में जैनधर्मोपासक थे। पर अन्त में वह दशा न रही। जैन धर्म के प्रचारकों एवं उपदेशकों का नितान्त अभाव था। इसी कारण धीरे-धीरे लोग पुनीत जैनधर्म को त्याग कर अन्य मतावलम्बी होते रहे। बात यहाँ तक हुई कि वहाँ जैनधर्मोपासक न रहे। आज जो इस प्रान्त में थोड़े बहुत जैनी दिखाई देते हैं वे यहाँ के निवासी नहीं हैं। इनमें से प्रायः सब मारवाड़ प्रान्त से व्यौपारार्थ गये हुए हैं। ये जैनी अब बंग आदि प्रान्तों में व्यौपार करते हैं। वहाँ के व्यौपार में भी जैनियों का अब विशेष हाथ है। पूर्व जमाने में तो यह प्रान्त जैनधर्म का केन्द्र रहा हुआ था। बीस तीर्थङ्करों ने इसी प्रान्त के सम्मेत सिक्खर पर्वत पर निर्वाण प्राप्त किया था राजग्रह के पाँच पहाड़ों पर भी अनेक मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया राजगृह, चम्पापुरी, पावापुरी, विशाला और पाटलीपुर तो जैनियों के रम्य क्षेत्र ही थे इतना ही नहीं पर भगवान् महावीर का जन्म

और विशेष विहार इसी पवित्र भूमि में हुआ था अतएव यह प्रान्त जैन धर्म से परिपूर्ण था।

(७) **कलिङ्ग प्रदेश।** महाराज अशोक के राज्यकाल के पहले क्या राजा और क्या प्रजा सब लोग जैनधर्मोपासक थे। कलिङ्गपति महामेघवाहन चक्रवर्ती महाराजा खारवेलने[1] जैनधर्म की उन्नति करने के हित प्रबल प्रयत्न किया था। उसके इस घोर परिश्रम का परिणाम स्वरूप जैन धर्म का प्रचार इस प्रान्त के बाहर भी ख़ूब हुआ था वहाँ के वातावरण का तो क्या कहना ? इसके पश्चात् विक्रम की दशवीं शताब्दी तक तो इस प्रान्त के अन्तर्गत आई हुई कुमारगिरि की कन्दराओं में जैन श्रमण निवास करते थे। इस बात को प्रमाणित करनेवाले शुभचन्द्र और कुलचन्द्र मुनियों के शिलालेख पर्याप्त हैं। इसके आगे विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दी में इस प्रदेश में जैन राजा प्रतापरुद्र का शासन था। उस समय भी जैनधर्म का प्रचुरता से प्रचार हो रहा था। किन्तु सदा एकसी दशा प्रायः किसी की भी नहीं रहती। अब तो कलिङ्ग प्रदेश में केवल इने गिने जैन दृष्टिगोचर होते हैं जो वहाँ व्यौपार के लिए रहते हैं। दिनों का फेर इसे कहते हैं कि जहाँ एक दिन जिधर देखो उधर जैनी ही जैनी दिखाई देते थे वहाँ आज खोजने पर भी कठिनाई से दिखाई देते हैं। अहा ! काल तेरी भी विचित्र लीला है !

(८) **पञ्जाब प्रान्त।** इतिहास देखने से विदित होता है कि विक्रम पूर्व की तीसरी शताब्दी में जैनाचार्य देवगुप्तसूरिजी ने पञ्जाब में पधार कर वहाँ इस धर्म की नींव दृढ़ की थी और

१ देखो हमारा लिखा कलिङ्ग देश का इतिहास।

उनके पट्टधर आचार्यश्री सिद्धसूरिजीने इस परम पवित्र लोक हितकारी एवं उपकारी जैनधर्म का जी-जान से प्रचार किया था। आपकी उच्च अभिलाषा थी कि पञ्जाब जैसे प्रान्त में जो प्रचार का उत्तम क्षेत्र है ख़ूब ज़ोरों से प्रचार कार्य किया जाय। इस कार्य के सम्पादन करने में सूरिजीने प्रगाढ़ परिश्रम किया। जैन धर्म पञ्जाब में सर्वोच्च पद प्राप्त कर गया। ऐसा कौनसा कार्य है जो प्रयत्न और परिश्रम करने से सिद्ध नहीं होता? वास्तव में सूरिजी को इस प्रचार कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। वंशावलियों को देखने से मालूम हुआ कि विक्रम की तेरहवीं शताब्दी में पञ्जाब से एक बड़ा भारी संघ सिद्धगिरि की यात्रा के लिए आया था। इस विशाल आयोजन से विदित होता है कि उस समय पञ्जाब में जैनियों की घनी बस्ती थी। यह धर्म पञ्जाब में निरन्तर पाला गया इतना ही नहीं पर गज़नी और उनसे भी परे जैन धर्म का प्रचार था। आज जो जैनी इस प्रान्त में दृष्टिगोचर होते हैं उनमें से अधिकाँश मारवाड़ ही से गये हुये लोग हैं।

अब से थोड़े समय पहले पंजाब में जैनियों की विस्तृत बस्ती थी। आज जो जैन धर्म का अस्तित्व पंजाब प्रान्त में पाया जाता है यह वास्तव में जैनाचार्य श्री देवगुप्तसूरिजी एवं सिद्धसूरिजी के परिश्रम का ही परिणाम है। यह उन्हीं की कृपा का फल है कि आज लौं जैन धर्म की पताका पंजाब में फहराती रही है।

(६) **सिन्ध प्रान्त**। विक्रम के पूर्व की तीसरी शताब्दी में आचार्य श्री यक्षदेवसूरि ने सिन्ध में प्रचार का झंडा रोपा और वहाँ के लोगों को विपुल संख्या में जैनी बनाया। आपश्री की व्यवस्था से जैन धर्म की नींव इस प्रान्त में पड़ी तथा इनके

पश्चात् आचार्य श्री कक्कसूरिजी ने उस नींव को दृढ़ किया। बहुत परिश्रम के पश्चात् सिन्ध प्रान्त में सर्वत्र जैनी ही जैनी दृष्टिगोचर होने लगे। सिन्ध प्रान्त के कोने कोने में जैन धर्म का उपदेश सुनाया गया तथा झुंड के झुंड जैनी जिनशासन की शीतल छाया में शान्ति पूर्वक रहते हुए अपनी आत्मा का उत्थान करने लगे। बाद में इनके शिष्य समुदाय ने भी इस प्रान्त में विचरण किया तथा जैन धर्मावलम्बियों की संख्या निरन्तर वृद्धिगत होती रही। उपकेश गच्छ चरित्र से विदित हुआ है कि विक्रम की तेरहवीं शताब्दी में आचार्य श्री कक्कसूरि के समय पर्यन्त केवल एक उपकेश गच्छोपासकों की देखरेख में ५०० जैन मन्दिर विद्यमान थे, इससे अनुमान हो सकता है कि उन मन्दिरों के उपासक भी बड़ी विशाल संख्या में थे।

उस समय के पश्चात् अत्याचारी यवनों ने जैनियों को बहुत सताया और उन्हें इसी कारण से इस प्रान्त को परित्याग करना पड़ा। वे आसपास के प्रान्तों में यवनों के अत्याचारों से ऊब कर जा बसे। इस प्रान्त में विक्रम की चौदहवीं शताब्दी तक तो जैनियों की गहरी आबादी थी। इसका प्रमाण यह है कि वंशा-वलियों में लिखा हुआ पाया गया है कि सिन्ध निवासी महान् धनी लुणाशाह नामक सेठ अपने कुटुम्ब और अन्य लोगों के साथ मरुधर प्रान्त में आया था। जिस प्रान्त में ऐसे ऐसे धनी और मानी सेठ रहते थे आज उस प्रान्त में केवल मारवाड़ और गुजरात से गये हुए कतिपय लोग जैन ही पाये जाते हैं। इसका वास्तविक कारण यह था कि जैन धर्म के उपदेशकों का पूरा अभाव था। आम तौर से जनता सरल परिणाम वाली होती है जब कोई सत्य मार्ग बतानेवाला नहीं होता है तो यह स्वाभाविक ही है कि वह भटक कर अन्य रास्ते का अवलम्बन करले। इस

प्रकार से सिन्ध के खास जैनी आज नाम को भी नहीं रहे। किसी ने सच कहा है कि Misfortunes never come alone यानी आफतें कभी अकेली नहीं आतीं। जो दशा बङ्गाल तथा कलिङ्ग आदि के जैनियों की हुई थी वही दशा इस प्रान्त के जैनी लोगों की हुई।

(१०) **कच्छ प्रान्त** विक्रम के पूर्व की तीसरी शताब्दी में जैनाचार्य श्री कक्वसूरिजी महाराज ने इस प्रान्त में पदार्पण कर जैनधर्म का प्रचार प्रारम्भ किया था। कक्वसूरि महाराजने कच्छ निवासियों पर बड़ा भारी उपकार किया। उन्हें जैनधर्म के परमपवित्र कल्याणकारी मार्ग का पथिक बनाने वाले जैनाचार्य श्री कक्वसूरि ही थे। इनके पीछे इनके पट्टधर शिष्योंने भी प्रचार का कार्य इस प्रान्त में जारी रखा। इनमें आचार्य श्री देवगुप्तसूरिजी ही मुख्य प्रचारक थे। कच्छ के कोने कोने में जैनधर्म का दिव्य संदेश सुनाया गया था। लोगों ने इस धर्म को अपनाया भी खूब। इनके शिष्य तथा प्रशिष्यों और परम्परागत शिष्यों ने भी इसी प्रान्त में विहार किया था। इतिहास देखने से विदित होता है कि विक्रम की चौदहवीं शताब्दी तक तो इस प्रान्त में झगडूशाह जैसे दानवीर जैनी हो चुके हैं। ऐसे ऐसे नररत्नोंने इस प्रान्त में जन्म ले जैनधर्म को पाल कर खूब यश कमाया। वैसी जाहोजलाली इस प्रान्त की अब न रही पर जैनधर्म की कुछ न कुछ प्रवृत्ति तो इस प्रान्त में अबलों विद्यमान रही है। समय समय पर कई मारवाड़ी भी मारवाड़ से यहाँ आ बसे। यहाँ यति लोग भी गहरी संख्या में रहते थे। विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दी तक तो मारवाड़ से कुलगुरु जाकर अपने श्रावकों की वंशावली लिख आया करते थे जो कि अबतक भी विद्यमान है।

(११) सौराष्ट्र (सोरठ) प्रान्त । इस प्रान्त में प्राचीन काल से ही जैनधर्म प्रचलित है। इस प्रान्तमें दो बड़े प्रसिद्ध तीर्थराज हैं जिनको जैनियों का बच्चा बच्चा तक जानता है। उनके परम पुनीत नाम शत्रुञ्जय और गिरनार तीर्थ हैं। इस प्रान्त की वल्लभी नगरी के प्रसिद्ध नरेश शिलादित्य के राज्यकाल में जैनधर्म इस प्रान्त के कोने कोनेमें फैल गया था तथा इसकी दशा बहुत उन्नत थी। आचार्य श्री देवर्द्धि गणिने वल्लभी नगरी में एक विराट सम्मेलन का आयोजन किया था तथा आगमों को पुस्तकरूपमें लिखाने का आवश्यक एवं समयोचित कार्य किया था। ऐसे ऐसे परोपकारी महात्माओं ही का हमारे पर परम अनुग्रह है कि जिनकी महिनत का हम लाभ उठाते हुए अर्वाचीन आगमान्तर्गत साहित्य देखते हैं।

पंचासर का राजवंश जैनधर्म्मोपासक था तथा पाटण के चांवडा वंशी भी चिरकाल से जैनी थे। महाराजा सिद्धराज जयसिंह तो आचार्य हेमचन्द्रसूरी के परम भक्त थे। महाराजा कुमारपाल तो अर्हन् धर्मोपासक ही नहीं वरन् बड़ा परिश्रमी और जैनधर्म प्रचारक था। इसने जैनधर्म की उन्नति के हित अपना सर्वस्व तक अर्पण कर दिया था। इसके बनाए हुए अनेक जिन मन्दिर तथा शिलालेख वृहत् संख्या में अब तक प्रस्तुत हैं। इन मन्दिरों पर की ध्वजाएँ आज तक कुमारपाल की कामनीय कीर्ति को बतला रही हैं तथा अनुकरणीय आदर्श उपस्थित करती हैं कि यदि किसी के पास धन हो तो वह उसका इस प्रकार सदुपयोग करे जिसके द्वारा कि अनेक भव्य जीवों का आत्म-कल्याण हो। विक्रम की तेरहवीं शताब्दी तक तो जैनधर्म सौराष्ट्र प्रान्त को देदीप्यमान कर रहा था। भीनमाल के नरेश

महरगुल के अत्याचार से उत्पीड़ित हुए मारवाड़ निवासी विक्रम की छठी शताब्दी में गुजरात में आ बसे थे। पाटण की स्थापना से लेकर विक्रम की तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी पर्यन्त तो मारवाड़ प्रान्त से अनेक महाजन संघ के सद्‌गृहस्थ विपुल संख्या में जा जा कर गुजरात में निवास करने लगे थे। आज जो सूरत, भरुच, बड़ौदा, खम्भात, भावनगर और अहमदाबाद आदि नगरों में जैन ओसवाल, पोरवाल तथा श्रीमाल घनी संख्या में बसते हैं ये सब के सब मारवाड़ ही से गये हुए हैं। अपनी आवश्यक्ताओं को पूर्ण करने के लिए उन्हें मारवाड़ छोड़ कर वहाँ बसना पड़ा। विक्रम की सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी तक तो मारवाड़ से कुलगुरु गुजरात में जा कर अपने श्रावकों की वंशावली लिख आया करते थे। उन वंशावलियों से स्पष्ट सिद्ध होता है कि मारवाड़ से जो जैनी गुजरात की ओर गये थे उनकी संख्या बहुत थी। इस अर्वाचीन काल में जो जैनधर्म का अभ्युदय गुजरात प्रान्त में विशेष दिखाई देता है उसका वास्तविक कारण यही है। इस प्रान्त के जैन वीरों की कामनीय कीर्ति की गाथाओं से इतिहास साहित्य आज भी शोभा पा रहा है शत्रुजयोद्धारक जावड़शाह पोरवाल वंशीय नानग लेहरीं वीरदेव और विमलाशाह जिन्होंने पाटणराज की स्थापना के समय से आबू के मन्दिर निर्माण के समय तक अर्थात् तीनसौ वर्ष तक जैनधर्म की उन्नति करने में अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया था। वीर वस्तुपाल तेजपाल उदायन बहाड़ चहाड़ मंत्री महामन्त्रियोंने जो जैन धर्म की सेवा की वह चिरकाल स्मरणीय है श्रीमान् देशलशाह, शत्रुँजय का पन्द्रहवाँ उद्धारक धर्मवीर समरसिंह, सहारणपाल, सहजपाल आदि ने मुसलमानों की कट्टर शत्रुता के समय भी जैनधर्म को देदीप्यमान रक्खा था मंत्रीमंडल

संतुमेहता आभूश्रेष्टि मुजल मंत्री आदि अनेक नररत्नों ने जैन-धर्म का प्रचार किया।

(१२) महाराष्ट्र प्रदेश भारत के दक्षिण के खानदेश, करणाटक, तैलंग आदि प्रान्तों में भी प्राचीन समय में जैनधर्म प्रचलित था। जिस समय भारत के पूर्वीय भाग में अकाल का दौरदौरा था। तो आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने अपने सहस्रों मुनियों के साथ दक्षिण के प्रान्तों में ही बिहार किया था। आपने उस समय दक्षिण के तीर्थों की यात्रा भी की यह बात उस समय के ग्रन्थों द्वारा आधुनिक इतिहासकार भी स्वीकार करते हैं इससे तो सिद्ध होता है कि महाराष्ट्र प्रान्त में भद्रबाहु स्वामी के प्रथम से ही जैनधर्म प्रचलित था। यह जैनियों का बड़ा क्षेत्र था इसी लिए उस विकटावस्था में सहसा सहस्रों मुनियों के साथ आपने विहार किया था। भद्रबाहु स्वामी से प्रथम कितने ही समय से वहाँ जैनधर्म प्रचलित था इसका एक स्थान पर प्रमाण भी मिलता है वह यह है कि पार्श्वनाथ पट्टावली में ऐसा उल्लेख हुआ है कि श्रीहरिदत्ताचार्य (महावीर स्वामी से पूर्व) के आज्ञावर्त्ती लौहित्याचार्य ने महाराष्ट्र की ओर विहार किया था तथा उनके शिष्य प्रशिष्य भी चिरकाल तक उसी प्रान्त में विचरण करते थे।

उपर्युक्त वृत्तान्त से विदित होता है कि भद्रबाहु स्वामीने इस क्षेत्र को उपयुक्त समझ कर ही इस ओर एकायक पदार्पण किया होगा। आपने दक्षिण की यात्रा के पश्चात् ही नैपाल की ओर विहार किया होगा। महाराजा अमोघवर्ष के राज्यकाल तक तो इस प्रान्त में जैनधर्म ख़ूब जाहोजलाली में था। इसके पश्चात् बीजलदेव के शासन पर्यन्त तो जैन धर्म इस प्रान्त में राष्ट्रधर्म के रूप में रहा। क्योंकि राष्ट्रकूटवंश, पाण्ड्य वंश, चोल वंश, कलचूरी

वंश तथा कलब वंश इत्यादि के सब राजा केवल जैन धर्मोपासक ही नहीं वरन् बड़े भारी प्रचारक थे। ये बातें शिलालेखों से प्रकट हुई हैं। किन्तु आज पर्यन्त वह दशा नहीं रही अब से बहुत पहले लगभग विक्रम की बारहवीं शताब्दी में वासवादत्त ने इस प्रान्त में लिङ्गायत मत की नींव डाली; उस दिन से जैनियों की संख्या निरन्तर घटती रहीं। ऐसे अनेक घृणित और निष्ठुर उपाय किये कि जिनका वर्णन करते लेखनी काँपती है—सहस्रों जैन मुनि क़त्ल किये गये केवल इसी कारण कि वे जैन धर्मोपासक थे। अत्याचार की कोई सीमा न थी। जैनियों को इस तरह के बिना कारण दण्ड दिये गये कि उन्हें विवश होकर अपना धर्म परिवर्तन करना पड़ा। यही सिद्धान्त चला Might is right जिसकी लाठी उसकी भैंस, जो अपने जैन धर्म पर पक्के रहे उन्हें अपना प्राण परित्यागन करना पड़ा। इसके फल स्वरूप उस प्रान्त में जैनियों की आबादी शीघ्र ही लुप्त हो गई। किन्तु आज भी गये गुजरे जमाने में महाराष्ट्र प्रान्त में जहाँ तहाँ जैन तीर्थ एवं जैन गुफाऐं विपुल संख्या में विद्यमान हैं। इस से स्पष्ट प्रकट होता है कि जैनियों का अतीत तो अति अति उज्जवल एवं उत्तम था। अर्वाचीन काल में तो इने गिने जैनी इस प्रान्त में दृष्टिगोचर होते हैं इनके सिवाय सब मारवाड़ तथा गुजरात प्रान्त से गये हुए हैं। जिस प्रान्त में प्रचुरता से जैनी पाए जाते थे वहाँ आज केवल आ कर बसे हुए जैनी मात्र प्रायः दिखाई देते हैं।

(१३) **अवन्ती प्रदेश**। इस प्रान्तः की राजधानी उज्जैन में जिस समय त्रिखण्डभुक्ता महाराजा सम्प्रति राज्य कर रहा था उस समय इस प्रान्त में जैन धर्म का अविच्छन्न साम्राज्य प्रसारित था। आचार्य श्री सिद्धसेन दिवाकरजीने महाराजा

विक्रम को प्रतिबोध देकर जैनी बनाया था; उसने भी जैनधर्म का खूब प्रचार किया था। उसने जी जान से प्रयत्न करके अपने साम्राज्य में जैनधर्म को खूब प्रसारित होने दिया। इसके अतिरिक्त राजा भोज के समय में भी जैन धर्म प्रचुरता से प्रचारित था। माण्डवगढ़ के पैथड नामक महामन्त्री और संग्राम सोनी के समय (वि० चौदहवीं शताब्दी) तक भी जैन धर्म का उचित प्रचार जारी था और बुन्देलखण्ड के राजा भी प्रायः जैनधर्मोपासक ही थे। अर्थात् विक्रम की सोलहवीं शताब्दी तक तो जैन धर्म इस मालवा प्रान्त में उन्नत अवस्था में था किन्तु आज जो यहाँ के जैनी हैं वे तो मारवाड़ से गये हुए ही हैं। इस प्रान्त में अवन्ती, मक्सी और माण्डवगढ़ नगर में अति प्राचीन तीर्थ आजलों विद्यमान हैं।

(१४) **संयुक्तप्रान्त**। इस प्रान्त में जैनधर्म प्राचीन समय से प्रचलित है। शौरीपुर, मथुरा, हस्तिनापुर आदि तीर्थ बड़े प्राचीन हैं। यह प्रान्त आजकल के कहलाए जानेवाले मध्यप्रान्त (Central Provinces) से भिन्न है। आचार्यश्री स्कन्धिल सूरिजी ने मथुरा नगरी में एक बृहत् साधु सम्मेलन किया था तथा आगामों को पुस्तक के रूप में लिखाने का प्रस्ताव पास कर बहुत सा इस विषय सम्बन्धी कार्य भी किया था। हम बड़े कृतघ्न कहलावेंगे यदि उनके इस असीम उपकार को भूल जायँ। आज पर्यन्त इसी प्रयत्न के परिणाम स्वरूप माथुर वाचना लोक प्रसिद्ध हैं। क्यों न हो? कोई भी किया हुआ सद् प्रयत्न कभी विफल नहीं हो सकता। इस प्रान्त में समय समय पर बड़े दानवीर नररत्नों का अवतरण हुआ है। विक्रम की नौवीं शताब्दी में ग्वालियर के नृपति आँम जैनधर्म उपासक ही नहीं वरन् परम

प्रभावशाली तथा उत्कट ओजस्वी प्रचारक भी था। इनकी संतान राजकोठारी के नाम से आज लों जैन जाति में प्रख्यात है। शत्रुजय तीर्थ का अमन्ति उद्धारक कर्माशाह इसी खानदान में हुआ था। इस प्रान्त में भी मारवाड़ से गये हुए कई व्यौपारी मौजूद हैं। इस प्रान्त में जैनधर्म की प्राचीनता के यों तो बहुत साधन मिल चुका है पर हाल ही में गवर्नमेण्ट सरकार ने मथुरा का कंकाली टीला का खोद काम करवाया जिसमें सैकड़ों जैनमूर्त्तियों या मंदिरों के खण्डहर मिले हैं और उनमें कई तो विक्रम पूर्व दो सौ वर्ष के बतलाये जाते हैं इससे यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि विक्रम या विक्रम पूर्व इस प्रान्त में जैनधर्म बड़ा ही उन्नत था।

(१५) **काशी कोशल प्रान्त**। इस प्रान्त में जैनधर्म प्राचीन समय से ही प्रचलित था कारण इस प्रान्त में भगवान् पार्श्वनाथ प्रभु का जन्म काशी नगरी के महाराजा अश्वसेन की वामा नाम की पटरानी की पवित्र रत्नकुक्ष से हुआ था। भगवान् पार्श्वनाथ ने दीक्षा धारण कर इस प्रान्त में जैन धर्म का खूंब प्रचार किया था। काशी कोशल के अठारा गण राजा भी सबके सब जैन ही थे। अन्तिम तीर्थङ्कर भगवान् महावीर का अन्तिम चतुर्मास पावापुरी में था। उस समय भी अठारा राजा भी भगवान् के अन्तिम समय सेवा में थे। बनारसी, सिंहपुरी अयोध्या आदि जिन कल्यानक भूमि जो तीर्थरूप कहलाती हैं वे सब इसी प्रान्त के अन्तर्गत हैं एक समय इस प्रान्त में जैन धर्म उन्नति के उच्च शिखर पर था।

(१६) **मेवाड़ (मेदपाट) प्रान्त**। इस प्रान्त में भी जैन धर्म प्राचीन समय से प्रचलित था तथा चित्रकूट के पंवार वंशी नृप भी जैनी ही थे। इस प्रान्त में श्री केसरियानाथजी

महाराज का धाम अति प्राचीन एवं प्रख्यात है। चित्तौड़ के राणा भी जैन धर्म का उचित आदर करते थे। इनके वंश में आज तक इस धर्म को उच्च स्थान मिलता आया है। राव रिड़मलजी तथा योधाजी के समय में बहुत से मारवाड़ निवासी जैन लोग मेवाड़ में जा बसे थे। उन लोगों का सम्बन्ध कई वर्षों तक मारवाड़ से रहा है। श्री सिद्धगिरि के अन्तिम उद्धारक स्वनाम धन्य कर्माशाह ने इसी प्रान्त में जन्म लिया था। धन्यधरा मेवाड़! जो अनेक दानी मानी जैन धर्मोपासक नररत्नों को जन्म देकर कृत्याकृत्य हुई। वीर भामाशाह इसी धरा का सपूत था कि जिसने महाराणा प्रताप को अपूर्व साहस और असंख्य द्रव्य भेंट कर भी जननी जन्म भूमि (मेवाड़) को स्वतन्त्र रक्खी। धन्य सूराशाह को जिसने भीषण दुकाल में मेवाड़ वासियों को अन्न दे प्राण बचाये। धन्य है आशाशाह को कि मुग़लों के विकट भय के समय महाराणा उदयसिंह को बचपन से अपने यहाँ रक्खा इत्यादि अनेक जैन वीरों ने मेदपाट में जैन धर्म को दीपाया और प्रचार किया।

(१७) मारवाड़ प्रान्त । यह प्रान्त जैन जातियों का उत्पत्ति स्थान है। आचार्य स्वयंप्रभसूरि तथा आचार्य श्री रत्नप्रभसूरि ने इस प्रान्त में पदार्पण कर वाममार्गियों के अत्याचार रूपी गढ़ों पर आक्रमण कर उन्हें दूर किया तथा महाजन वंश की स्थापिना की थी उस समय से चिरकाल तक तो इस प्रान्त में जैनधर्म राष्ट्रधर्म के रूप में रहा तथा उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर इसकी पताका फहराने लगी। किन्तु विक्रम की छठी शताब्दी में यहाँ के निवासी राज्य कष्ट से दुःखी हो इस प्रान्त को छोड़ कर आस पास के अन्य प्रान्तों में जाकर वास करने लगे। यह

सिलसिला अब तक भी जारी है। यद्यपि उस तरह का राज्य कष्ट इस समय नहीं है तथापि जीविका निर्वाह का प्रश्न यहाँ के निवासियों के लिए दिन प्रतिदिन जटिल हो रहा है अतएव इस समस्या को हल करने के उद्देश से यहाँ के कई लोग दूसरे प्रान्तों में जाकर बस रहे हैं तथा मारवाड़ियों का अधिकांश व्यौपारी वर्ग मारवाड़ के बाहर जा कुछ उपार्जन कर वापस अपने प्रान्त में आ जाता है। इतना होने पर भी जैनियों की ¼ आबादी तो केवल इस एक प्रान्त में ही है। सब जैनी इस समय १२ लाख के लगभग हैं; उनमें से ३ लाख जैनी इस समय मारवाड़ में विद्यमान हैं। इस भूमि में अनेक नररत्नों ने जन्म ले जैन धर्म की खूब सेवा की है। जैन धर्म की उन्नति के लिए तन, मन और धन को अर्पण करने वाले इस प्रान्त में अनेक नररत्न उत्पन्न हो चुके हैं। उपर्युक्त आचार्यों के समय से आज तक जैन धर्म इस प्रान्त में अविच्छिन्न रूप से चला आ रहा है।

यह तो आप पढ़ चुके हैं कि जैन धर्म एक राष्ट्रीय धर्म था इसमें किसी जाति वर्ण का हक्क या ठेका नहीं था। वीर की प्रथम शताब्दी में आचार्य स्वयंप्रभसूरि तथा रत्नप्रभसूरि ने लाखों अजैनों को जैन धर्मावलम्बी बनाया। वह समय ही ऐसा था कि उन वाममार्गियों से उनको अलग रखना था जिससे उस समूह का नाम महाजन वंश रक्खा। उसकी उदारता ने उसमें बहुत वृद्धि की पर पीछे से ज्यों ज्यों वह जातियों का रूप पकड़ता गया त्यों त्यों उसमें संकीर्णता प्रवेश होती गई अतएव यहाँ जरा जैन जातियों का हाल भी पाठकों की जानकारी के लिए लिख देना उपयोगी होगा। जैन जातियों के जन्म समय से लेकर ३०३ वर्ष तक तो दिनप्रति दिन जैनियों का हर प्रकार से महोदय ही होता रहा। जो

जाति प्रारम्भ में लाखों की संख्या में थी वही जाति मध्यकाल में क्रोड़ों की संख्या तक पहुँच गई। यदि उसी क्रम से महोदय होता रहता तो आज न मालूम जैन जाति किस उच्च पद पर दृष्टि-गोचर होती किन्तु किसी ने सच्च कहा है कि होनहार ही बलवान है। ठीक वैसा ही हुआ। जब से उपकेशपुर के स्वयंभू महावीर स्वामी की मूर्त्ति की आशातना हुई है तब से इस जाति की खैर नहीं रही है। जैन जातियों की उन्नति के मार्ग में रोड़ा अटक गया है। ह्रास अपने चरम सीमा तक होने लगा। बीच बीच में दशा सुधारने के लिए तथा जैन जातियों की अभिवृद्धि के लिए अनेक जैनाचार्यों ने उपाय और प्रयत्न किये। समय समय पर अनेक राजाओं और राजपूतों आदि को इतर धर्म से प्रतिबोध दे दे कर जैन जातियों में मिलाते गये इस से जैन जातियों की संख्या चिरकाल तक अधिक बनी रही तथापि पूर्व की भाँति उस दशा का सुधार नहीं हुआ इतने में जो जैन समाज में अनेक मत मतान्तरों का प्रादुर्भाव हुआ और वह रही सही जैन जातियाँ अनेक विभागों में विभाजित हो अपनी अमूल्य शक्तियों और उच्चादर्श से भी हाथ धो बैठी इससे ही कई लोगों को यह कहने का समय मिल गया कि जैनाचार्यों ने यह बुरा किया कि राजपूत जैसे वीर बहादुर वर्ण को तोड़ जैन जातियाँ बना उनको कायर और कमज़ोर बना दिया। वास्तव में यह कहना कितना भ्रम-पूर्वक है वह हम आगे चल कर विस्तारपूर्वक बतलावेंगे।

एक तरफ तो पूर्वोक्त कारणों से जैन जातियों का ह्रास होना आरम्भ हुआ था दूसरी ओर ऐसे ऐसे असाध्य रोग लगने शुरू हुए कि जो कि जैन जातियों के ख़ून को जौंक बनकर निरन्तर चूस रहे हैं। ऐसी ऐसी नाशकारी प्रथाओं ने जैन जातियों में

घर कर दिया कि उन बाधा कर्ता रूढ़ियों के कारण जैन जातियाँ अपना विकास तक नहीं कर सकी हैं। ये रूढ़ियाँ नित्य नई नई बन कर कैसी कैसी आफतें उपस्थित कर रही हैं वह हम आगे चल कर सविस्तृत बता देंगे कि ये जैन जातियों के महोदय में विघ्न करने वाली हैं। अगर जाति अग्रेसर अपने संगठन द्वारा उन बाधाकारक कुप्रथाओं को आज दूर कर दें तो कल ही जैन जातियों का पुनः महोदय होने में किसी प्रकार की शंका नहीं रहे। शासन देव से प्रार्थना है कि वह सब को सद्बुद्धि प्रदान करे। शम्

उपसंहार

उपरोक्त लेख से आप बखूबी समझ गये होंगे कि पूर्व जमाने में जैन आचार्य व मुनिवर अपना धर्म प्रचार करने में किस प्रकार कटिबद्ध थे वे उपसर्ग और परिसह तो क्या पर धर्म के लिये बलिदान होने में तनिक भी संकोच नहीं करते थे न तो उनको सुन्दर उपाश्रय की दरकार थी और न चाह दूध तथा मनोज्ञ आहार पानी की परवाह थो वे एकाद प्रान्त को ही अपना विहार क्षेत्र नहीं समझते थे पर देश में और प्रदेश में बड़े ही उत्साह से विहार करते थे। आज की भाँति उस जमाने में साधन भी नहीं थे। उन अत्याचारियों ने जैनधर्म के प्रचारकों पर कहाँ तक जुल्म गुजारा ? उन कठिनाइयों का उन धर्म वीरों ने किस प्रकार सहन किया जिसको सुनते ही हमारे जैसों का हृदय थरथर कम्पने लग जाता है पर उन धर्म प्रचारकों ने उस ओर लक्ष नहीं देकर अपने कार्य को रफ़्तार से बढ़ाते ही गये जिसका परिणाम यह आया कि उस समय विश्व में जैनधर्म का झंडा फहरा रहा था इस मशीन का कार्य पांच पच्चीस वर्ष नहीं पर सैकड़ों वर्ष बड़ी तेज़ी से चला और जैन संख्या चालीस करोड़ तक पहुँच गई। भारत के अलावा यूरोप और अमेरिका तक जैनधर्म का डंका बज रहा था पर इस मशीन का कार्य चैत्यवासियों के साम्राज्य में बहुत शिथिल पड़ गया था उन्होंने पुद्गलानदी-शिथलाचारीग्रामोग्राम में मठ बना के अपनी अपनी अनुकूलता देख स्थिरवास कर दिया था नया जैन बनाना तो दूर रहा पर जो थे उन का भी रक्षण नहीं कर सके बीच बीच में

इस मशीन को चलाने वाले हुए भी थे पर वे बहुत थोड़े हुए जिस प्रान्त में वे विचरते वहाँ ही उन्होंने थोड़े बहुत नये जैन बनाये पर दूर दूर प्रान्तों में वे भी नहीं पहुँच सके जिसका फल यह हुआ कि वे प्रान्त जैनधर्म निर्वासित बन गये हजारों जैनालय शिवालय के रूप में परिवर्तन हो गये। इसी कारण जैन संख्या वेग से घटने लगी और आज केवल नाम मात्र की संख्या रह गई।

यह कहना सोलह आने सत्य है कि जिस धर्म के उपदेशकों का विहार क्षेत्र विशाल है उनका धर्म भी विशाल क्षेत्र से प्रसरित होता है जहाँ विहार क्षेत्र की संकुचितता है उनका धर्म कभी दुनियाँ में नहीं फैलता है आज हम मुसलमानों और क्रिश्चीनियों के धर्म प्रचारकों की ओर देखते हैं तो उन्होंने करोड़ों मनुष्यों को अपनी ओर आकर्षित कर लिये हैं और बुद्धधर्म का भारत में नाम निशान तक नहीं रहा था केवल पुस्तकों में ही उनका नाम था उन्होंने भी आज भारत में मशीनें खोल दीं और रफ़्तार से धर्म प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया है जब हमारे धर्म नेताओं ने अभी तक कुम्भकरणी निंद्रा में ही अपने जीवन की सफलता समझ रक्खी है जब विश्व में चारों ओर उन्नति के डंके बज रहे हैं धर्म प्रचार हो रहा हैं तब एक जैन समाज ही ऐसी है कि दुनियाँ की धाड़े में पीछे रही है जैन कौम में दिगम्बर तो फिर भी कुछ कर रहे हैं उन्होंने यूरोप तक अपनी आवाज पहुँचाई हैं स्थानकवासी तेरहपन्थी आगे तो नहीं बढ़े पर मूर्ति पूजकों को हड़पने का पूरे जोश से यत्न अवश्य कर रहे हैं पर एक मूर्तिपूजक समाज ही ऐसी है कि जिनके उपदेशक एकाद प्रान्त को छोड़ अन्यत्र विहार करना मानो अपने व्रत के बाहर की बात समझ रहे हैं तथापि वे उन्नति के शब्द से बाहर नहीं है कारण आज पद्वियों की आपसी क्लेश कदागृह की इस समाज ने काफी उन्नति करली

है संकुचितता की तो इतनी उन्नति हुई है कि एक दूसरे के उपाश्रम में उतर भी नहीं सकते हैं वन्दन व्यवहार और आहार पानी का तो काम ही क्या ऐसी संकोचवृत्ति हो वहाँ क्या आशा रक्खी जाती है। जैसा हाल साधु समाज का है वैसा ही गृहस्थों का है इसमें भी रूढीचूस्त (पुराने बिचार) और नवयुवक सुधारक पार्टी के आपस के मत भेद कि ज्वाला समाज को किस ओर लेजा रही है पर दोनों पार्टियों ने समाज का कितना काम किया है? सिवाय राग द्वेष की वृद्धि क्लेश कदागृह के एक कदम भी आगे नहीं बढ़े हैं।

जब हम हमारी शिक्षाप्रचार की ओर देखते हैं तो वहाँ भी अन्धकार का पार नहीं है जिस शिक्षालय से हम आशा करते हैं कि प्रत्येक साल दस बीस समाज सेवक पैदा होंगे उनके बदले हम प्रतिवर्ष पाँच पचीस नास्तिक पैदा हुए देखते हैं कि न तो वे धर्म के काम के हैं और न वे कर्म के काबिल रहते हैं इस पाश्चात्य शिक्षा ने हमारे अन्दर इतनो बेकारी फैला दी है कि जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते हैं कारण इस शिक्षा में धार्मिक और व्यौपारिक शिक्षा का तो प्रायः अभाव ही है और समाज का व्यवसाय प्रायः साधारण व्यौपार पर निर्भर है जिससे तो वे हाथ धो बैठे और नौकरी मिलती नहीं है यह ही कारण है कि समाज में बेकारों की संख्या बढ़ती जा रही है अब उनके लिये एक ही स्थान रहा है कि वे जैन साधुओं के पास जा कर दीक्षा लेकर भिक्षावृति पर अपना गुज़ारा करें।

हम आज के वातावरण से मूर्त्तिपूजक जैन समाज का भविष्य कुछ और ही रूप से देख रहे हैं कारण प्रथम तो इस समाज में निर्नायकता हद के पार चली गई है दूसरा गुजरात ने साधुओं पर न जाने क्या जादू डाला हैं कि वे हज़ारों लेख लिखने पर

चारों ओर जनता की पुकार होने पर, जगह जगह तिरस्कार होने पर भी वे गुर्जर को नहीं छोड़ते हैं। किसी समाज के साधुओं में ऐसा प्रतिबन्ध शायद ही हो कि जितना मूर्त्तिपूजक समुदाय के साधुओं में है। दूसरा मूर्त्तिपूजक समुदाय दिन प्रतिदिन कमती होता जा रहा है और इन पर प्रतिदिन धर्म खर्चा का वजन बढ़ता ही जाता है। करीबन् चार लाख की संख्या में धनाढ्य मनुष्य तो अँगुलियों पर गिन जायँ उतने ही हैं। उन पर ४०००० मन्दिरों की पुजाई का एक वर्ष के ढाई किरोड़ रुपये और तीर्थयात्रा, पूजा, प्रतिष्ठा, उपधान, उजमना, नये मन्दिर, जीर्णोद्धार, विद्या प्रचार, वग़ैरह में कम से कम ढाई किरोड़ गिना जाय तो एक वर्ष का पाँच किरोड़ का खर्चा तो केवल धर्मदाखाता का ही है। इसमें जो लाखों रुपये देने वाले थे वे उल्टे खिलाफ़ बनते जा रहे हैं। इधर व्यौपार की हालत गिरती जा रही है आर्थिक समस्या इतनी विकट बनती जा रही है इस पर भी हमारे समाज नेता जो वे अपने को कर्त्ताहर्त्ता समझ बैठे हैं उनकी आँख नहीं खुलती है यह ही हमारा भविष्य स्पष्ट बतला रहा है।

पूज्यवर आचार्यों, उपाध्यायों, पन्यासियों और मुनिवरों गुर्जर गुफ़ा से मुँह निकाल प्रभातीय प्रकाश की ओर देखो आपके शिर पर समाज की कितनी जोखमदारी है। आपके इशारे मात्र से समाज लाखों किरोड़ों द्रव्य खर्च कर रही है आप चाहो वह साथ देने को कटिबद्ध तैयार है। आपके अन्दर शक्ति है, त्याग है, विद्वत्ता है, साहस है यदि आप चाहो तो दूसरों के बजाय हजार गुना कार्य कर सकते हो। शुद्धि और संगठन आपके घर की वस्तुएँ हैं आपके ही पूर्वजों ने इसको सब से पहले प्रचलित की थी आज उसी शुद्धि का लाभ अन्य लोग ले रहे हैं और आप अपनी आँखों से देख रहे हो क्या आप इसको सहन कर

सकोगे। नहीं हरगिज नहीं, समय आ पहुँचा है अब कायरता से काम नहीं चलेगा धर्मध्वजा हाथ में लेकर प्रत्येक प्रान्त में विहार करो और भगवान महावीर का स्याद्वाद और अहिंसा धर्म का सन्देश प्रत्येक प्राणी के हृदय में पहुँचा दो तब ही पूर्वाचार्यों की मुआफिक आपका सुयशः और धवल कीर्ति विश्वव्यापी बनेगी।

जैन धर्म का खास ध्येय आत्म कल्याण और मोक्ष प्राप्त करने का है इसी उद्देश्य से इस धर्म का नियम सख्त से सख्त रक्खा गया था जिसको दृढ़ शक्ति वाला अर्थात् वज्र ऋषभ नाराच संहनन वाला ही पाल सके। वे ढाई हजार वर्षों पूर्व दृढ़शक्ति वालों के नियम आज के मनुष्यों के लिए भी मौजूद हैं हाँ बीच में आपत्ति के समय उन नियमों में कुछ परिवर्तन किया भी गया था जिसके उल्लेख छेदसूत्रों और भाष्य चूर्णियों के अन्दर पाये जाते हैं तत्पश्चात् न तो ऐसा कारण हुआ न परिवर्तन भी हुआ पर जैसे जैसे गच्छ मत जुदे होतेगये वैसे वैसे संकीर्णता और भी बढ़ती गई और उसके साथ माया और दम्भ ने भी अपना दाव खेला। इससे लोक रुचि में भी परिवर्तन होता गया कल्याण का स्थान ममता ने गृहण किया "रागी दोष न पश्यते" "द्वेषी गुण न पश्यते" यह वाड़ाबन्धी का मुख्य कारण हुआ। इसने ही धर्म प्रचार की बुद्धि व वीरता का लोप किया। यदि माया, दम्भ, ममता और वाड़ाबन्धी आज हमारे आचार्यों और मुनियों का पीछा छोड़ दे तो यह वीरों की सन्तान वीर है और अपनी वीरता का परिचय देने को तैयार है।

समाज के नेताओ! आप जानते हैं कि मुनियों के व्रत नियम बड़े ही कठिन हैं वे पदचारी हैं, एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में जाने

में समय और साधनों की ज़रूरत है इसलिए अब केवल साधु समाज पर ही सब बोझा डाल के आप निश्चिन्त न बनें, विलास में ही अपनी जिन्दगी की सफलता न समझें। दो चक्र से रथ चलता है। सम्राट् चन्द्रगुप्त और सम्प्रति आपके ही पूर्वज थे उन्होंने अपने निज पुरुषों को अनार्य्य देश में भेज के मुनि आगमन जैसा क्षेत्र तैयार करवाया और बाद में मुनियों को उस प्रदेश में विहार की प्रार्थना की थी तो आपका भी कर्त्तव्य है कि आप भी क्रिश्चियन और समाजियों की मुआफिक धर्म प्रचार करने में कमर कस कर तैयार हो जाइये। केवल लाखों करोड़ों का खर्चा कर सभा और महासभा के अन्दर लम्बे चौड़े भाषण कर रजिस्टरों के कागज़ों में प्रस्ताव पास कर जनता को धोखा न दें पर कुछ काम कर बतलावे। साधु आपकी सहायता करेंगे और साधुओं की आप सहायता करो कि पूर्व की भाँति हम प्रत्येक प्रान्त में जैन धर्म का प्रचार देखें और विश्व पवित्र जैन धर्म की छत्रछाया में अपना कल्याण करें। मैंने किस भावना से यह लेख लिखा है इस लेख के पढ़ने से ही आपको मालूम हो जायगा इस पर भी किसी का दिल दुखे तो मैं सदैव क्षमा प्रार्थी हूँ।

श्रीरत्नप्रभसूरिसद्गुरुभ्यो नमः

पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय इतिहास-प्रेमी ज्ञान-प्रचारक मुनि महाराज श्री श्री १००८ श्री श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब के सदुपदेश से श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमालादि संस्थाओं द्वारा पुस्तकें मुद्रित हुई जिनका

सूचीपत्र

नम्बर	पुस्तकों के नाम	मूल्य
१	श्रीप्रतिमाछत्तीसी	)॥०
२	गयवरविलाप	।)
३	दानछत्तीसी	)॥०
४	अनुकम्पाछत्तीसी	)॥०
५	प्रश्नमाला स्तवन	–)
६	स्तवनसंग्रह भाग पहला	=)
७	पैंतीस बोलों का थोकड़ा	=)
८	दादासाहिब की पूजा	भेट
९	चर्चा का पब्लिक नोटिस	)॥
१०	देवगुरुवन्दनमाला	–)
११	स्तवनसंग्रह भाग दूजा	=)
१२	लिंगनिर्णय बहुत्तरी	–)
१३	स्तवनसंग्रह भाग तीसरा	=)
१४	सिद्धप्रतिमा मुक्तावली	॥)
१५	बतीससूत्र दर्पण	=)
१६	जैन नियमावलि	)॥०
१७	जै० मं० चौरासी आशातना	)॥०
१८	डंका पर चोट	भेट
१९	आगम निर्णय प्र० अंक	=)
२०	चैत्यवंदनादि	–)
२१	जैनस्तुति	)॥०
२२	सुबोध नियमावली	)॥०
२३	जैनदीक्षा	)॥०
२४	प्रभुपूजा विधि	)॥०
२५	व्याख्याविलास प्र० भा०	=)
२६	शीघ्रबोध भाग १ ला	।)
२७	” ” २ जा	।)
२८	” ” ३ जा	।)
२९	” ” ४ था	।)

सूचीपत्र

३०	शीघ्र बोध ५ वाँ	।)
३१	सुखविपाकसूत्र मूलपाठ	≡)
३२	शीघ्रबोध भाग ६ ठा	।)
३३	दशवैकालिक मूलपाठ	=)
३४	शीघ्रबोध भाग ७ वाँ	।)
३५	कागदहुन्डी पेठ परपेठमे भरनामा	॥)
३६	तीन निर्नामा लेखकोंका उत्तर	भेट
३७	ओशीयाके ज्ञानभंडार की लिस्ट	"
३८	शीघ्रबोध भाग ८ वाँ	।)
३९	" " ९ वाँ	।)
४०	नंदीसूत्र मूलपाठ	।)
४१	तीर्थमाला—यात्रा स्तवन	भेट
४२	शीघ्रबोध भाग १० वाँ	।)
४३	अमे साधु शामाटे थया	भेट
४४	विनंतीशतक	–)
४५	द्रव्यानुयोग प्र० प्रवेशिका	=)
४६	शीघ्रबोध भाग ११ वाँ	।)
४७	" " १२ वाँ	।)
४८	" " १३ वाँ	।)
४९	" " १४ वाँ	।)
५०	आनन्दघन चौबीसी	भेट
५१	शीघ्रबोध भाग १५ वाँ	।)
५२	" " १६ वाँ	।)
५३	" " १७ वाँ	।)
५४	कक्कावत्तीसी सार्थ (अध्यात्म)	।)
५५	व्याख्याविलास भाग २ जा	=)
५६	" " ३ जा	=)
५७	" " ४ था	=)
५८	स्वध्याय संग्रह गहुली सं.	।)
५९	राई देवसी प्रतिक्रमण	=)
६०	उपकेशगच्छ लघुपट्टावली	–)
६१	वर्णमाला (अक्षरज्ञान)	)॥०
६२	शीघ्रबोध भाग १८ वाँ	
६३	" " १९ वाँ	
६४	" " २० वाँ	४)
६५	" " २१ वाँ	
६६	" " २२ वाँ	
६७	" " २३ वाँ	।।।)
६८	" " २४ वाँ	
६९	" " २५ वाँ	
७०	तीनचतुर्मासका दिग्दर्शन	भेट
७१	हितशिक्षा प्रश्नोत्तर "	॥)
७२	व्यवहारसूत्रकी समालोचना	=)
७३	स्तवन संग्रह भाग ४ था	)॥०
७४	पुस्तकों का बड़ा सूचीपत्र	भेट
७५	महासती सुरसुन्दरी कथा	≡)
७६	पंचप्रतिक्रमणसूत्र	।)
७७	मुनि नाममाला	=)
७८	कर्मग्रन्थ हिन्दीअनुवाद	।)
७९	दानवीर जगडुशाह	–)
८०	शुभमुहूर्त शुकनावलि	≡)
८१	जैन जाति निर्णय प्रथमांक	।)
८२	" " द्वितीयांक	

८३ पंचप्रतिक्रमण विधिसहित भेट
८४ प्रा० छन्दगुणा० भा०१ला =)
८५ धर्मवीर सेठ जिनदत्त (कथा) =)
८६ जैन जातियों का सचित्र इतिहास ।)
८७ ओसवाल ज्ञाति समय निर्णय =)
८८ मुखवस्त्रिका नि० निरी० —)
८९ निराकार निरीक्षण भेट
९० दो विद्यार्थियों का संवाद =)
९१ प्रा० छंदगुणावली भा० २ =)
९२ प्रसिद्ध वक्ता की तस्करवृति —)
९३ धूर्त पंचों की क्रान्तिकारी पूजा
९४ उपकेश वंश का इतिहास —)
९५ नयचक्रसार हिन्दी अनुवाद ।=)
९६ जैन समाज की वर्तमान दशा ≡)
९७ स्तवनसंग्रह भा० ५ वाँ ≡)
९८ समवसरण प्रकरण हिन्दी भेट
९९ सादड़ी के लुङ्का और गोढवाड़ ।)
१०० वालीसंघ का फेसला भेट
१०१ प्रा० छंदगुणावली भा० ३ जा ≡)
१०२ प्रा० छन्द गुणावली भा० ४ था =)
१०३ जैनजातिमहो०प्र० १ ला
१०४ " २ जा
१०५ " ३ जा
१०६ " ४ था
१०७ " ५ वाँ
१०८ " ६ ठा
(१०३–१०८) ४
१०९ जिनगुण भक्ति बहार भा० १ ला भेट
११० प्रा० छंदगुणा० भा० ५ वाँ —)
१११ कायापुर पट्टन का पत्र)।।।०
११२ जड़ चैतन्य का संवाद =)
११३ प्रा० छन्दगुणा० भा०६ठा =)
११४ बालाग्राममे प्रतिष्ठा महो० भेट
११५ तत्त्वार्थसूत्र हिन्दी अनु० ।।)
११६ शान्तिधारापाठ
११७ आनन्दघनपद मुक्तावलि =)
११८ कापरडातीर्थ स्तवनावलि =)
११९ श्रीनन्दीश्वर द्वीपका महो० भेट
१२० दशवैकालकसूत्र ४ अध्या० ।।)
१२१ श्रीवीरपार्श्व निशानी =)
१२२ व्यवहार समकित के ६७ बोल —)
१२३ जिनगुण भक्तिबहार भा.२जा भेट
१२४ तत्त्वार्थसूत्र मूल ।।)
१२५ जैनतत्त्वसार भा० १ ला ≡)
१२६ नित्यस्मरण पाठमाला ।)

१२७ जैनतत्वसार भा० २ जा =)
(अन्योन्य संस्था द्वारा प्रकाशित)
१२८ कर्मवीर समरसिंह, ऐतिहा० १।)
१२९ कापरडातीर्थ का इतिहास ।)
१३० उगता राष्ट्र –)
१३१ लघु पाठ माला –)
१३२ भाषणसंग्रह भाग १ ला ≡)
१३३ " " २ जा –)
१३४ नौपदजी की अनुपूर्वी –)
१३५ मुनि ज्ञानसुन्दर (जीवन) भेट
१३६ समीक्षा की परीक्षा भेट
१३७ अर्ध भारत की समीक्षा ≡)
१३८ पालीनगर में धर्म का प्र० भेट
१३९ गुणानुराग कूलक =)
१४० द्रव्यानुयोग द्वि० प्रवे० =)
१४१ शुभगीत भाग १ ला)॥०
१४२ ,, ,, २ जा)॥०
१४३ ,, ,, ३ जा)॥०
१४४ विधि सहित रा० दे० प्रतिक्रमण
१४५ जैसलमेर का संघ ॥)
१४६ आदर्श शिक्षा भेट
१४७ श्रीसंघकोंसिलोको ॥)
१४८ वीर स्तवन भेट
१४९ जैन मन्दिरों के पूजारी =)
१५० प्राचीन जैन इति० भा० १
१५१ ,, ,, ,, २
१५२ ,, ,, ,, ३
१५३ ,, ,, ,, ४

नोट—पूर्वोक्त १५३ पुस्तकों से परमोपयोगी २५ पुस्तकें चून के द्वितीयावृत्ति छपाके सुन्दर टाइप मजबुत कागज़ और रेशमी जिल्द में बँधवा के तैयार करावाइ जिसका नाम "ज्ञानविलास"

मूल्य प्रचारार्थ मात्र रु० १॥) है।

(क) शीघ्रबोध भाग १ से ५ तक पक्की जिल्द रु० १॥)
(च) ,, ,, ६ से १० ,, ,, १।)
(त) ,, ,, ११ से १६ तथा २३-२४-२५ १।)
(प) ,, ,, १७ से २२ तक ४)
(द) जैन जाति महोदय प्रकरण १-२-३-४-५-६ सचित्र जिसमें ४३ सुन्दर चित्र १००० से अधिक पृष्ट रेशमी पक्की जिल्द होने पर भी केवल ४) रु० मूल्य रक्खा है। पुस्तक मिलने का पता—

--श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला मु० फलोदी (मारवाड़)

--श्री जैनश्वेताम्बर सभा पीपाड़ (सीटी) मारवाड़।

मारवाड़ का महान्

प्रभाविक तीर्थ

श्री कापरड़ा जी

का

चौमंजिल और चौमुखा मन्दिर बड़ा ही रमणीय और भूमि से ६५ फ़ीट ऊँचा है। और यहाँ की श्री स्वयंभू पार्श्वनाथ भगवान् की मूर्ति भी हरे पाषाण की आलीशान अपने शान की भारत में एक ही है। अतएव निवेदन है कि सह-कुटुम्ब जरूर यात्रा पधार आत्म कल्याण करें। व अभी तीन साल से एक जैन बोर्डिङ्ग भी विद्यालय सहित चल रहा है। उसके भी निरीक्षण का लाभ उठावें। फ़क़त्

निवेदक—

दफ्तरी जवाहरलाल जैन

Master—S.S. P. Jain. V.,

Kapardaji.